जैनधर्म

यशवंतकुमार नांदेचा

जैन धर्म अति प्राचीन और शाश्वत धर्म है। सच्चा जैन वही है जो जैन आचार विचार का नियमपूर्वक पालन करता है। आज हम अधिकांश नाम से जैन हैं। धार्मिक प्रवृत्तियों की ओर हमारा झुकाव नहीं है और आपस में टकराने में ही हम अपना गौरव अनुभव करते हैं। यह सुखद नहीं है और हमें इस पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिये।

जैन धर्मानुसार इस अवसर्पिणी काल में २४ तीर्थंकर हुए हैं जिनमें प्रथम ऋषभदेव व अंतिम महावीर हैं। वर्तमान विद्वान नेमीनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर को ऐतिहासिक पुरुष मानने लगे हैं और उनकी दृष्टि प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव तक जाने लगी है। मोहनजोदड़ो एवं हरप्पा से प्राप्त मुद्राओं में ऋषभदेव कार्योत्सर्ग मुद्रा में अंकित हैं इससे भी जैन धर्म की प्राचीनता सिद्ध होती है। रूसी समाज शास्त्री श्रीमती ग्रसेवा ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि जैन धर्म वेदों की रचना से पूर्व विद्यमान था क्योंकि वेदों में जैन तीर्थंकर का विवरण मिलता है। जैन धर्म परम्परावादी धर्म न होकर पुरुषार्थ प्रधान मूलक धर्म है। राष्ट्रीय विकास में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। इसीसे वर्तमान में जैन धर्म जिंदा है। जैन इतिहास में तिरसठ सवाका पुरुष हुए। जिनमें २४ तीर्थंकर भी हैं जिन्होंने मानव सभ्यता को उसके उषाकाल में ही एक क्रमबद्ध रूप देने की कोशिश की। तीर्थंकर से पूर्व कुलकरों का वर्णन है। नाभिराय के पुत्र ऋषभदेव भारतीय लोक जीवन में इस प्रकार गुंथे हुए हैं कि जहां एक ओर उनकी अनेक प्रतिमाएं प्राप्त हैं, वहीं दूसरी ओर उन्हें लेकर कई प्रामाणिक प्रागैतिहासिक सामग्री भी मिलती है। हिन्दी के भक्त कवि महाकवि सूरदास ने भी सूर सागर में ऋषभदेव का वर्णन किया है। ईसा की चौथी से बारहवीं शताब्दी के मध्य दक्षिण भारत पर जैन धर्म का व्यापक प्रभाव एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य है। कदेव, गंग, राष्ट्रकूट, चालुक्य, होयसल राजवंश जैन थे।

जैन धर्म हमें बतलाता है कि हिंसा मत करो, अहिंसा परमोधर्म का पालन करो। जैन अहिंसा की परिधि में केवल मानव ही नहीं अपितु समस्त प्राणिमात्र आता है। "जियो और जीने दो" का अहिंसा का सिद्धान्त अत्यन्त ही सारगर्भित है।

जैन धर्म की अन्य विशेषता यह है कि इसने सभी युगों में उदारता और धीरज के साथ तथ्यों का परितोलन किया और खण्डन-मण्डन की बेकार शैली से हटकर बिना किसी धर्म की अवहेलना किये अनेकांत की उदार चिंतन पद्धति के माध्यम से सर्वधर्म समभाव को साकार करने का प्रयत्न किया। वस्तुतः सच्चाई को खोज निकालने का यह आध्यात्मिक संगणक है।

जैन धर्म ने अंधविश्वासी और रूढ़ियों को स्वप्न में भी स्वीकार नहीं किया। इसलिये वह चिरनूतन नया हुवा है। वह नर से नारायण बनने की क्षमता में पूरी तरह विश्वास करता है। वह हर प्राणी को अपने भाग्य का विधाता मानता है। कोई भी अपने पुरुषार्थ द्वारा परामात्म को प्राप्त कर सकता है।

जैन धर्म में भीरुता को कोई स्थान नहीं है। यहां खुले आसमान के नीचे किया जाने वाला स्वस्थ चिंतन है। वहां न कोई वैचारिक दबाव न कोई पूर्वाग्रह। वहां तो बात को देखो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समझो और जी चाहे तो अंगीकार करो। बिना साधना के जैन धर्म को समझाने का प्रयास खरगोश को शृंगन्याय के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यही कारण है कि जैन धर्म में सदियों पूर्व व्यक्ति को वैचारिक दासता से स्वतंत्र किया और लोक भाषाओं के माध्यम से सारे देश की स्वाधीन चेतना को जगाया। जैन धर्म ने ही सबसे पहले एक लोकाभिमुख क्रांति का शंखनाद किया था और मुट्ठीभर लोगों के बौद्धिक और शास्त्रीय शोषण को ललकारा था। वैज्ञानिक क्षेत्र में भी जैन दर्शन की बड़ी देन है जिसका पूर्ण तटस्थ मूल्यांकन अभी होना शेष है। पुदयत्न के सूक्ष्म निरूपण द्वारा इसने विज्ञान को हजारों साल पूर्व आश्चर्य-जनक तथ्य दिये हैं। परमाणु की व्याख्या एवं सृष्टि रचना के रहस्यों को खोलने में समर्थ हुवा। जैनागम से उपलब्ध कई वैज्ञानिक तथ्यों को आज के वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है। जैन धर्म का भेद विज्ञान भी एक अनूठी देन है।

विशेषावश्यक भाष्य, ज्ञानसार, सूत्रकृतांग, भगवतिसूत्र, गोमट्टसार, सर्वार्थसिद्धि, पंचास्तिकाय, द्रव्य संग्रह, तत्वार्थ सूत्र एवं ऐसे ग्रन्थ रत्न एक लम्बी साधना के परिणाम हैं।

जैन तपश्चर्या कोई शरीर ताड़ना नहीं है वह भेद विज्ञान का अपूर्व सत्यान्वेषण है। जो कष्ट एक वैज्ञानिक भौतिक तथ्यों की खोजबीन में उठाता है। जैन मुनि भी वैसी ही कठोर साधना आनुभूतिक विश्लेषण अथवा चेतन के जड़ से पृथक्करण में करता है। जैन दर्शन स्वानुभूति का विज्ञान है और वास्तक में उसे इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिये। इसी वैज्ञानिक चिंतन और परखनिधि के कारण जैन धर्म प्राचीन होते हुए भी चिरनूतन है।

मनुष्यों को पशुओं से विकसित मानकर वैज्ञानिक डार्विन ने विकास के एक नये सिद्धान्त का प्रवर्तन किया। किन्तु जैन धर्म ने मनुष्य को मूल में मनुष्य मान कर ही उसके क्रमबद्ध विभाग की कथा कही है।

जैन धर्म सम्यक्त्व, औचित्य और उत्तमता पर बल देता है। वह कहता है कि जो सत्य है, उसे उसकी संपूर्णता में ढूंढो, जो उचित है वह कहो, करो और अंत तक देखो कि सत्य भी तुम्हारे जीवन में है या नहीं ? रास्ता भले ही लम्बा हो, किन्तु अपावन न हो। उत्कृष्टता जहाँ भी हो उसका वरण करो। ○

(जैन विद्वानों द्वारा · · · · पृष्ठ १८१ का शेष)

१०. लोलिम्बराग

हिन्दी भाषा में रचित यह एक महत्वपूर्ण वैद्यक रचना है। इसके अध्ययन से ज्ञात होता है कि यह ग्रंथ संस्कृत के इसी नाम से प्रसिद्ध वैद्यक ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद है। इस ग्रंथ का दूसरा नाम "वैद्य जीवन" भी है--ऐसा श्री अगरचन्दजी नाहटा के एक लेख से ज्ञात होता है। वस्तुतः संस्कृत भाषा में कविवर लोलिम्ब राज ने सुललित शृंगारिक शैली में "वैद्य जीवन" नामक ग्रंथ की रचना की है जो प्रकाशित है और वर्तमान में उपलब्ध है। प्रस्तुत उपर्युक्त कृति इसी ग्रंथ का अनुवाद है। इस ग्रंथ की रचना यति गंगारामजी द्वारा की गई है जो अमृतसर निवासी यति सूरजरामजी के शिष्य थे। इस ग्रंथ का रचना काल सं. १८७२ है।

११. सूरत प्रकाश

यह ग्रंथ भी कविवर यति गंगारामजी द्वारा रचित है। इस ग्रंथ का नामकरण सम्भवतः रचयिता ने अपने गुरु के नाम का सम्बन्ध स्थापित करने की दृष्टि से किया है। इसका रचना काल सं. १८८३ है। इसे "भाव दीपक" भी कहा जाता है। इसमें विभिन्न रोगों की चिकित्सार्थ अनेक औषध योगों का उल्लेख है।

१२. भाव निदान

कविवर यति गंगारामजी की यह तीसरी वैद्यक रचना है जो आयुर्वेदीय निदान पद्धति की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस ग्रंथ का रचना काल वि. सं. १८८८ है। यह ग्रंथ पद्यात्मक प्राचीन शैली में रचित है।

इन तीनों में से किसी भी ग्रंथ में लेखक ने अपने विषय में किंचित् मात्र भी प्रकाश नहीं डाला है। इससे उनका व्यक्तिगत जीवन परिचय अज्ञात है। इन तीनों रचनाओं का उल्लेख--"नागरी प्रचारिणी पत्रिका" में प्रकाशित "दी सर्च फार हिन्दी मैन्युस्क्रिप्ट इन दि पंजाब" (१९२२-२४) में पृष्ठ ३० पर किया गया है।

उपर्युक्त सभी ग्रंथ पंजाब अथवा सिंध प्रान्त में रचित हैं। अंतिम दो ग्रंथों में रचना स्थान का उल्लेख नहीं है, तथापि उनकी रचना पंजाब के ही किसी स्थान में की गई है यह असंदिग्ध है। इस सम्पूर्ण विवरण से यह स्पष्ट है कि अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में पंजाब में जैन यतियों ने हिन्दी के माध्यम से अनेक ग्रंथों की रचना कर आयुर्वेद को जीवित रखने और हिन्दी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org